इकाई 10 प्रतिमानाटकम् (तृतीय अङ्क) – भाग 3

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 प्रतिमानाटकम् (तृतीय अङ्क) – श्लोक 1-11

10.3 सारांश

10.4 शब्दावली

10.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

10.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- महाकवि भास की नाट्य निपुणता से परिचित हो सकेंगे।
- प्रतिमाओं के दृश्य विधान में भास के अवदान को जान सकेंगे।
- भास के प्रकृति निरूपण के वैशिष्ट्य को जान सकेंगे।
- दुःखी मन में आशंकायें किस प्रकार उत्पन्न होती हैं? यह मनोवैज्ञानिक तथ्य भी जान सकेंगे।
- भरत का अपने पिता एवं भाइयों के प्रति अनुराग को जान सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

पूर्व इकाई में आपने यह अध्ययन किया कि राम, लक्ष्मण और सीता चौदह वर्ष के लिए वन को चले गये हैं। राजा दशरथ उनके वनगमन के दुःख से अत्यन्त पीड़ित हैं। राम के कथन से यह ज्ञात होता है कि दशरथ उस समय बोलने की स्थिति में नहीं थे। उन्होंने मात्र संकेत से ही राम, लक्ष्मण और सीता को वन जाने का निर्देश दिया। आपके पाठ्यक्रम में प्रथम और द्वितीय इकाइयों के रूप में महाकवि भास विरचित प्रतिमानाटकम् का प्रथम अंक निर्धारित किया गया है। तृतीय और चतुर्थ इकाई के रूप में आप इसी नाटक के तृतीय अंक का अध्ययन करेंगे। तृतीय अंक का आरम्भ भरत के ननिहाल से लौटने के प्रसंग से होता है। भरत को ननिहाल में यह सूचना दी जाती है कि महाराज दशरथ बहुत ही रुग्ण हैं। मार्ग में सारथि के साथ आते हुए भरत उससे पूछते हैं कि मेरे पिता को कौन सा रोग हुआ है? सारथि उत्तर देता है कि मुझे इस विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं है। वैद्य उनकी चिकित्सा कर रहे हैं। भरत का रथ अत्यन्त वेग से अयोध्या की ओर बढ़ रहा है तथा भरत घर पहुँचकर अपने पिता के दर्शन की लालसा से अत्यन्त प्रसन्न होते हैं। उनके मन में कहीं न कहीं अनिष्ट की आशंका भी है। वह सारथि से कहते हैं कि मैं पिता जी को प्रणाम कर रहा हूँ तथा वह मुझे आशीर्वाद दे रहे हैं। भरत की बात सुनकर सारथि अत्यन्त दुःखी होता है। वह मन में सोचता है कि हम अयोध्या पहुँचने ही वाले हैं और महाराज दशरथ की मृत्यु का समाचार इन्हें कैसे दिया जाएगा? भारतीय संस्कृति में दुःखद

समाचार देना अमंगलसूचक माना गया है। अतः भास ने प्रतिमाओं का एक दृश्य कल्पित किया है जो उनकी अपनी कल्पनाशीलता तथा नाट्यकला का परिचायक है। भरत एक देव मन्दिर में विश्राम के लिए रुकते हैं और वहाँ विराजमान मूर्तियों को प्रणाम करने के लिए अन्दर जाते हैं। पुजारी देवकुलिक उन्हें मूर्तियों का दर्शन कराता है। भरत दिलीप आदि इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं की मूर्तियों को प्रणाम करते हैं। दशरथ की मूर्ति को देखकर वह घबरा जाते हैं और उनसे पूछते हैं कि यह किसकी प्रतिमा है? देवकुलिक उन्हें दशरथ की मृत्यु का समाचार देता है और भरत पश्चाताप करते हैं।

10.2 प्रतिमानाटकम् (तृतीय अङ्क) – श्लोक 1-11

मूलपाठ – **(ततः प्रविशति सुधाकारः)**

सुधाकारः – (सम्मार्जनादीनि कृत्वा) भवतु, इदानीं कृतमत्र कार्यमार्यसम्भवकस्याज्ञप्तम्। यावन्मुहूर्तं स्वप्स्यामि। (स्वपिति) (भोदु, दाणि किदं एत्थ कय्यं अय्य सम्भवअस्स आणत्तं। जाव मुहूत्तं सुविस्सं।)

(प्रविश्य)

भटः – (चेटमुपगम्य ताडयित्वा) अङ्घो दास्याः पुत्र! किमिदानीं कर्म न करोषि? (ताडयति) (अङ्घो दासीएपुत्त! किं दाणि कम्म ण करेसि?)

सुधाकारः – (बुद्ध्वा) ताडय मां, ताडय माम्। (तालेहि मं तालेहि मं।)

भटः – ताडिते त्वं किं करिष्यसि? (ताडिदे तुवं किं करिस्ससि?)

सुधाकारः – अधन्यस्य मम कार्तवीर्यस्येव बाहुसहस्त्रं नास्ति। (अनण्णस्य मम कत्तवीअस्स विअ बाहुसहस्सं णत्थि।)

भटः – बाहुसहस्त्रेण किं कार्यम्? (बाहुसहस्सेण किं कय्यं?)

सुधाकारः – त्वां हनिष्यामि। (तुवं हणिस्सं।)

अनुवाद – (सुधाकार (चूना पोतने वाला कारीगर) का प्रवेश)

सुधाकार – (झाड़ू-बहारू लगाकर एवं अन्य समस्त कार्य पूर्ण करने के उपरान्त) अच्छा मैंने आर्य सम्भवक के द्वारा कहे गये सारे काम पूरे कर लिये। अब थोड़ी देर आराम से सो लूँ। (सो जाता है)।

(भट (सिपाही) का प्रवेश)

भट – (भृत्य के पास जाकर तथा उसे पीटते हुए) अरे दासीपुत्र! तू काम क्यों नहीं करता (ऐसा कहकर पीटने लगता है)

सुधाकार – (जागकर) मार लो मुझे, मार लो।

भट – मैं तुम्हें मारता हूँ, देखता हूँ कि तुम मेरा क्या कर लेते हो।

सुधाकार – क्या कहूँ, मुझ अभागे को भगवान् ने राजा कार्तवीर्य अर्जुन के समान हजार हाथ नहीं दिये।

भट – कार्तवीर्य के समान हजार हाथ होते तो तुम मेरा क्या कर लेते।

सुधाकार – मैं तुम्हें मार डालता।

मूलपाठ –

भटः – एहि दास्याः पुत्र! मृते मोक्ष्यामि। (पुनरपि ताडयति।) (एहि दासिएपुत्त! मुदे मुञ्चिस्सं।)

सुधाकारः – (रुदित्वा) शक्यमिदानीं भर्तः! मेऽपराधं ज्ञातुम्। (शक्कं दाणिं भट्टा! मे अवराहं जाणिदुम्।)

भटः – नास्ति किलापराधो नास्ति। ननु मया सन्दिष्टो भर्तृदारकस्य रामस्य राज्यविभ्रष्टकृतसन्तापेन स्वर्गं गतस्य भर्तुर्दशरथस्य प्रतिमागेहं द्रष्टुमद्य कौशल्यापुरोगैः सर्वैरन्तःपुरैरिहागन्तव्यमिति। अत्रेदानीं त्वया किं कृतम्? (णत्थि किल अवराहो णत्थि। ण मए सन्दिट्ठो भट्टिदारअस्स रामस्स रज्जबिब्भट्ठकिंदसन्दावेण सग्गं गदस्स भट्टिजो दसरहस्स पडिमागेहं देट्ठुं अज्ज कौसल्लापुरोएहि सब्बेहि अन्तेउरेहि इह आअन्तव्वं त्ति। एत्थ दाणि तुए किं किदं?)

अनुवाद –

भट – अरे दासीपुत्र! अब तो मैं तुम्हें मार कर तभी छोड़ूंगा। (फिर पीटने लगता है)

सुधाकार – (रोते हुए) स्वामिन् क्या मैं अपना अपराध जान सकता हूँ।

भट – क्या तुम्हारा कुछ अपराध नहीं है? भला मैंने तुम्हें आज्ञा दी थी कि राजकुमार श्रीराम के राज्यविच्युत होकर वन चले जाने से उनके शोक से सन्तप्त हुए महाराज दशरथ ने अपना प्राण दे दिया। इस समय उन मृत महाराज की प्रतिमा जहाँ स्थापित है उस गृह को देखने के लिये कौशल्यादि समस्त रानियाँ आने वाली हैं तो बताओ तुमने यहाँ आकर क्या काम किया?

मूलपाठ –

सुधाकारः – पश्यतु भर्ता अपनीतकपोतसन्दानकं तावद् गर्भगृहम्। सौधवर्णकदत्तचन्दनपञ्चाङ्गुला भित्तयः। अवसक्तमाल्यदामशोभीनि द्वाराणि। प्रकीर्णा बालुकाः। अत्रेदानीं मया किं न कृतम्? (पेक्खदु भट्टा अवणीदकवोदसन्दाणअं दाव गब्भगेहं। सोहवण्णअदत्तचन्दणपञ्चाङ्गुला भित्तीओ। ओसत्तमल्लदामसोहीणि दुवाराणि। पइण्णा बालुआ। एत्थ दाणि मए किण किदं?)

भटः – यद्येवं विश्वस्तो गच्छ। यावदहमपि सर्वं कृतमित्यमात्याय निवेदयामि। (जइ एवं विस्सत्थो गच्छ। जाव अहं वि सव्वं किदं त्ति अमच्चस्स णिवेदेमि।)

अनुवाद –

सुधाकार – स्वामिन् आप ही देख लीजिये! जिस गर्भगृह में झाड़ू बहारू के न लगने से कबूतरों ने अपने घोंसले बना रखे थे उन घोसलों को नष्ट कर मैंने गर्भगृह को सर्वथा स्वच्छ बना दिया है। दीवारों पर चूना पोतकर उन्हें स्वच्छ कर दिया है इतना ही नहीं, उन पर पाँचों अङ्गुलियों से चन्दन के छाप लगा दिये हैं। दरवाजों को पुष्पमालाओं से सुसज्जित कर दिया है। मार्ग में आने वालों की सुविधा के लिये कोमल तथा महीन बालू बिछा दी है। अब आप ही कहिये मैंने क्या नहीं किया?

भट – अच्छा, यदि ऐसी बात है तो तुम निर्भय होकर अपनी इच्छानुसार या जहाँ जी चाहे जाओ। मैं भी मन्त्री जी के पास जाकर सूचित करूँ कि सब ठीक-ठाक है।

मूलपाठ – **(निष्क्रान्तौ)**

(प्रवेशकः)

(ततः प्रविशति भरतो रथेन सूतश्च)

भरतः – (सावेगम्) सूत ! चिरं मातुलपरिचयादविज्ञातवृत्तान्तोऽस्मि। श्रुतं मया दृढमकल्यशरीरो महाराज इति। तदुच्यताम् –

पितुर्मे को व्याधिः

सूतः– हृदयपरितापः खलु महान्

भरतः – किमाहुस्तं: वैद्याः।

सूतः – न खलु भिषजस्तत्र निपुणाः।

भरतः – किमाहारं भुङ्क्ते शयनमपि

सूतः – भूमौ निरशनः

भरतः – किमाशा स्याद्

सूतः – दैवं

भरतः – स्फुरति हृदयं वाहय रथम्।।1।।

अनुवाद – (दोनों का प्रस्थान)

(प्रवेशक)

(रथ में बैठे भरत एवं सारथि का प्रवेश)

भरत – (कुछ उद्विग्न से होकर) सारथे ! चिरकाल पर्यन्त मामा जी के यहाँ रहने से मुझे घर का समाचार नहीं मिला। सुना है कि महाराज शरीर से अत्यन्त अस्वस्थ हैं तो बताओ मेरे पिता को कौन-सी व्याधि है?

सूत – महाराज! उन्हें कोई शारीरिक रोग नहीं है। किन्तु दारुण मानसिक सन्ताप है।

भरत – तो वैद्यों ने इस विषय में क्या कहा?

सूत – वैद्य लोग उस रोग के निदान में सर्वथा असमर्थ हैं।

भरत – अच्छा, महाराज क्या खाते हैं और किस प्रकार सोते हैं?

सूत – महाराज वे पृथ्वी पर निराहार शयन कर पड़े हुए हैं।

भरत – उनके जीने के विषय में कैसी आशा है?

सूत – देव जाने। इस विषय में कुछ कहा नहीं जा सकता।

भरत – सूत, तब तो मेरा हृदय धड़क रहा है, रथ को शीघ्र हाँको।।1।।

शब्दार्थ – मे पितुः = मेरे पिता जी को, को व्याधिः = कौन सा रोग है, वैद्याः = चिकित्सक, तम् = उनके विषय में, किम् = क्या, आहुः = कहते हैं, तत्र खलु = उस विषय में, भिषजः = चिकित्सक, न निपुणाः = कुछ नहीं समझ पा रहे, किमाहारं भुङ्क्ते = क्या वे भोजन ठीक से करते हैं?, शयनमपि = उन्हें नींद आती है, निरशनः

= बिना कुछ खाए, भूमौ = भूमि पर, किमाशा स्याद् = उनके विषय में क्या आशा की जाए, दैवम् = यह भगवान् के अधीन है, हृदयम् = हृदय, स्फुरति = व्याकुल हो रहा है, वाहय = आगे बढाओ।

टिप्पणी – हृदयपरितापः = हृदयस्य परितापः (षष्ठी तत्पुरुष समास), पितुर्मे = पितुः+मे (विसर्ग सन्धि), आहुस्तम् = आहुः+तम् (विसर्ग सन्धि), भिषजस्तत्र = भिषजः+तत्र (विसर्ग सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में शिखरिणी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है **''रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभलागः शिखरिणी''** अर्थात् जिस छन्द में यगण, मगण, नगण, सगण, भगण तथा एक लघु और एक गुरु वर्ण हो तथा छठें और ग्यारहवें वर्णों पर यति हो तो वहाँ शिखरिणी छन्द होता है।

मूलपाठ –

सूतः – यदाज्ञापयत्यायुष्मान्। (रथं वाहयति)

भरतः – (रथवेगं निरूप्य) अहो नु खलु रथवेगः। एते ते,

द्रुमा धावन्तीव द्रुतरथगतिक्षीणविषया,
नदीवोद्वृत्ताम्बुर्निपतति मही नेमिविवरे।
अरव्यक्तिर्नष्टा स्थितमिव जवाच्चक्रवलयं–
रजश्चाश्वोद्धूतं पतति पुरतो नानुपतति ।।2।।

अन्वयः – द्रुतरथगतिक्षीणविषयाः द्रुमाः धावन्ति इव। मही उद्वृत्ताम्बुः नदी इव नेमिविवरे निपतति। अरव्यक्तिः नष्टा चक्रवलयम् जवाद्, स्थितमिव (भाति) अश्वोद्धूतं रजः च पुरतः पतति न अनुपतति।। 2।।

व्याख्या – रथवेगं निरूपयति–द्रुतरथगतिक्षीणविषया–द्रुतया–शीघ्रया रथगत्या = रथसंचालनेन क्षीणविषयाः = क्षीणः स्वल्पः विषयो दृग्गोचराः वयवः येषां ते तादृशाः द्रुमाः = वृक्षाः धावन्ति इव प्रतीयन्ते। रथवेगमहिम्ना त्वरया दृश्यमाना अपि वृक्षाः स्वल्पावयवत्वेनेव दृग्गोचरतां यान्ति अतोल्पधावन्त इव दृश्यन्ते। मही = भूमिः उद्वृत्ताम्बुः = उद्भ्रान्तजला नदी इव नेमिविवरे = प्रधिरन्ध्र निपतति इव ज्ञायते। अरव्यक्तिः–अराणाम् = नेमिनाभिमध्यवर्त्तिदण्डा करभागानाम् व्यक्तिः स्फुटावभासमाना या पूर्वं पृथक् प्रतीयमानाऽसीत् सा नष्टा = तिरोहिता। जवात् = वेगातिशयात् चक्रवलयम् = रथचक्रमण्डलम् स्थितमिव = निश्चलमिव प्रतीयते। वेगाधिक्येन रथचक्रभ्रमणं भूमौ न संलक्ष्यते इत्यर्थः। अश्वोद्धूतम् = अश्वैः उद्धूतम् = खुराघातसमुद्भवं रजः = धूलिश्च पुरतः = अग्रे पतति न अनुपतति अनु = रथस्य पृष्ठभागे न पतति रथस्य दूरं निर्गमनादिति भावः। अत्र रथवेगस्य स्वाभाविकरूपेण वर्णनात् स्वभावोक्तिरलङ्कारः। धावन्तीवेत्यादौ उत्प्रेक्षापि। शिखरिणीवृत्तम्।।2।।

अनुवाद –

सूत – जैसी आज्ञा (कहकर रथ चलाता है)

भरत – (रथ का वेग भली-भाँति देखकर) अहो कितना अच्छा रथ का वेग है -

द्रुततर रथ के वेग के कारण वृक्षों के कुछ ही भाग दृष्टि से दिखाई पड़ रहे हैं और वे दौड़ते से प्रतीत हो रहे हैं। यह सारी पृथ्वी भंवर से युक्त जल वाली नदी के समान

धुरी के छिद्रों में सिमटती हुई जैसी प्रतीत हो रही है। बड़ी तेजी से घूमने के कारण रथ के धुरे दिखाई नहीं पड़ रहे हैं। रथ के पहिये ऐसे मालूम पड़ रहे हैं मानो वे निश्चल हो गये हैं। बहुत क्या, घोड़ों के टापों से उड़ी हुई धूलि रथ के आगे के भाग पर गिर रही है। उसके पीछे के भाग पर नहीं पड़ती क्योंकि इतनी देर में रथ बहुत आगे बढकर चला जाता है।।2।।

शब्दार्थ – द्रुतरथगतिक्षीणविषया = रथ की तेज गति के कारण क्षण भर में दृष्टि से दूर होने वाले, द्रुमाः = वृक्ष, धावन्तीव = मानो दौड़ रहे हैं, मही = पृथ्वी, उद्वृत्ताम्बुः = ऊपर की ओर उछल रहे जल वाली, नेमिविवरे = रथचक्र की धूरि के छिद्र में, अरव्यक्तिर्नष्टा = रथ के पहिए में लगी तीलियाँ नष्ट सी हो गई है, चक्रवलयम् = रथ के पहियों का घेरा, स्थितमिव = रुका हुआ सा लग रहा है, अश्वोद्धूतम् = घोड़ों के द्वारा उड़ायी गई धूल, पुरतः = आगे, रजः = धूल, पतति = गिर रही है, नानुपतति = पीछे नहीं गिर रही है।

टिप्पणी – चक्रवलयम् = चक्रस्य वलयम् (षष्ठी तत्पुरुष समास), अश्वोद्धूतम् = अश्वैः उद्धूतम् (तृतीया तत्पुरुष समास), उद्वृत्ताम्बुः = उद्वृत्तम् अम्बुः यस्याः सा (बहुव्रीहि समास), अरव्याक्तिः = अराणाम् व्यक्तिः (तत्पुरुष समास), धावन्तीव = धावन्ति+इव (दीर्घ सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार एवं शिखरिणी छन्द है।

मूलपाठ –

सूतः – आयुष्मन्! सोपस्नेहतया वृक्षाणामभितः खल्वयोध्यया भवितव्यम्।

भरतः – अहो न खलु स्वजनदर्शनोत्सुकस्य त्वरता मे मनसः। सम्प्रति हि,

पतितमिव शिरः पितुः पादयोः स्निह्यतेवास्मि राज्ञा समुत्थापित–
स्त्वरितमुपगता इव भ्रातरः क्लेदयन्तीव मामश्रुभिर्मातरः।
सदृश इति महानिति व्यायतश्चेति भृत्यैरिवाहं स्तुतः सेवया
परिहसितमिवात्मनस्तत्र पश्यामि वेषं च भाषां च सौमित्रिणा ।।3।।

अन्वयः – पितुः पादयोः (मम) शिरः पतितमिव, स्निह्यता राज्ञा समुपस्थापित इव अस्मि। भ्रातरः त्वरितम् उपगता इव, मातरः माम् अश्रुभिः क्लेदयन्ति इव, सदृश इति महान् इति व्यायतश्च इति भृत्यैः सेवया स्तुत इव अहं तत्र आत्मनः वेष भाषां च सौमित्रिणा परिहसितम् इव पश्यामि।।3।।

व्याख्या – इदानीं = अयोध्यागमनान्तरं स्वाभीष्टकल्पनम् मनसा अनुभवः नाह–पितुः = दशरथस्य पादयोः = चरणयोः, शिरः = मम मस्तकं पतितमिव। स्निह्यता = सुतवात्सल्यादतिशयस्नेहं दर्शयता राज्ञा समुपस्थापितः = पादतलादुत्थाप्य स्वाङ्कमारोपित इव, अस्मि। भ्रातरः = रामादयः, त्वरितम् = शीघ्रम्, उपगता = सन्निकट प्राप्ता इव मामिति शेषः मातुलकुलादागतं मां संश्रुत्य सत्वरं परिवार्य स्थिता इत्यर्थः। मातरः = जनन्यः माम् अश्रुभिः = प्रहर्षजन्यनेत्रजलबिन्दुभिः क्लेदयन्ति = आर्द्रयन्ति इव। सदृशः = यथा इतो मातुलकुलं गतस्तदवस्थः एव परावृतः इति महान् इति, यावदाकारो गतस्ततो अपचितावयवः सन् परावृत्त इति। व्यायतः = विशाल इति कथयद्भिः भृत्यैः = परिचारकैः सेवया अहं स्तुतः = गुणवर्णने प्रसक्तः इव तत्र स्वगृहे आत्मनः वेषम् = कैकयदेशोचितपरिधानीयम् भाषाम् = तद्देशीयभाषाप्रभावितम् भाषाम्

सौमित्रिणा = लक्ष्मणेन परिहसितम् इव = परिहास्यमानमिव पश्यामि = अनुभवामि। लक्ष्मणो हि कैकयदेशजन्यां मदीयां भाषां वेषं च श्रुत्वा दृष्ट्वा च परिहसिष्यतीति भावः। अत्र भाविवृत्तस्य भरतेन प्रत्यक्षीकरणात् भाविकनामालङ्कारः। 'प्रत्यक्षा इव य दावाः क्रियन्ते भूतभाविनः' इति तल्लक्षणात्। उपजातिश्छन्दः।।3।।

अनुवाद –

सारथी – श्रीमन्! वृक्षों की सघनता तथा शीतलता से जान पड़ता है कि अब अयोध्या यहीं कहीं समीप में ही है।

भरत – अहो! यह हमारा मन आत्मीय जनों के दर्शनार्थ कितना उतावला हो रहा है क्योंकि इस समय –

मुझे मालूम पड़ रहा है कि मैंने पिताजी के चरणों में अपना सिर नवा दिया है, राजा ने भी वत्सलता से मुझे चरणों पर से उठाकर अपनी गोद में ले लिया है। मेरे आने का समाचार पाते ही मेरे सभी भाइयों ने शीघ्रता से पास आकर मुझे घेर सा लिया है, माताओं के आनन्दाश्रुओं से मेरा शरीर आर्द्र हो रहा है। कोई सेवक कहता है राजकुमार जैसे जाने के समय थे अब भी वैसे ही हैं। कोई कहता है नहीं नहीं, अब वे बढ़ गये हैं और पहले की अपेक्षा इनका शरीर भी सुपुष्ट दिखाई पड़ता है, इस प्रकार भृत्यगण मेरे विषय में स्तुतिपरक वचन कह रहे हैं। लक्ष्मण मेरी भिन्न प्रकार की वेशभूषा को देखकर तथा भिन्न प्रकार की भाषा सुनकर मेरा परिहास करते जैसे प्रतीत हो रहे हैं।।3।।

शब्दार्थ – पितुः = पिता जी के, पादयोः = चरणों में, शिरः = मस्तक, पतितमिव = झुका हुआ सा, स्निह्यता = स्नेहपूर्वक, राजा = राजा दशरथ ने, समुत्थापित इव = उठा सा लेना, भ्रातरः = राम आदि भाई, उपगताः = पास आए हुए थे, मातरः = मातायें, अश्रुभिः = आँसुओं से, क्लेदयन्तीव = भिगो सी रही हैं, भृत्यैः = सेवकों के द्वारा, सेवया = सेवा करके, सौमित्रणा = लक्ष्मण के द्वारा, परिहसितमिव = मजाक सा उड़ाया जाना।

टिप्पणी – व्यायतश्चेति = व्यायतः+चेति (विसर्ग सन्धि), इवाहम् = इव+अहम् (दीर्घ सन्धि), सौमित्रिणा = तृतीया विभक्ति एकवचन, अश्रुभिः = तृतीया विभक्ति बहुवचन।

प्रस्तुत श्लोक में भाविक अलंकार और उपजाति छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है **''अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।''** जिस छन्द के चरणों में इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा दोनों छन्दों के लक्षण चरणभेद से उपलब्ध हों, वहाँ उपजाति छन्द होता है।

मूलपाठ –

सूतः – (आत्मगतम्) भोः कष्टम्, यदयमविज्ञाय महाराजविनाशमुदर्के निष्फलामाशां परिवहन्नयोध्यां प्रवेक्ष्यति कुमारः। जानद्भिरप्यस्माभिर्न निवेद्यते। कुतः,

पितुः प्राणपरित्यागं मातुरैश्वर्यलुब्धताम्।
ज्येष्ठभ्रातुः प्रवासं च त्रीन् दोषान् कोऽभिधास्यति ?।।4।।

अन्वयः – पितुः प्राणपरित्यागं मातुः ऐश्वर्यलुब्धताम् ज्येष्ठभ्रातुः प्रवासं च इति त्रीन् दोषान् कः अभिधास्यति ।।4।।

व्याख्या – पितुः प्राणपरित्यागम् = दशरथमरणम्, मातुः = कैकेय्याः भरत जनन्या ऐश्वर्यलुब्धताम्–ऐश्वर्ये = राज्यैश्वर्ये लुब्धताम्–लुब्धाया भावः ताम् = लोभयुक्तताम् ज्येष्ठभ्रातुः = श्रीरामस्य प्रवासम् = वनगमनं चेति त्रीन् दोषान् = हृदयखेदजनकान् दुःसंवादान् कः अभिधास्यति न कोऽपीत्यर्थः। एकोऽपि दुःसंवादः मर्मव्यथाकरत्वाद् खेदजनकः। किं पुनः त्रयः अतः अहं नैवेतान् कथयिष्यामीति सूताभिप्रायः।।4।।

अनुवाद –

सारथी – (स्वगत) ओह! कितने दुःख की बात है कि कुमार महाराज की मृत्यु से अवगत न होने के कारण झूठी आशा लिये अयोध्या में प्रवेश करने जा रहे हैं। हम जानते हुए भी इन्हें कुछ बता नहीं पा रहे हैं। बताऊँ भी कैसे? क्योंकि –

पिता का स्वर्गवास, माता का राज्यैश्वर्य के प्रति लोभ और बड़े भाई का वनवास ये एक से एक बढ़कर ऐसे उद्वेगजनक संवाद हैं कि एक का भी कहना कठिन है, फिर इन तीनों को एक साथ ही किस प्रकार कहा जा सकता है?।।4।।

शब्दार्थ – पितुः = पिता जी का, प्राणपरित्यागम् = प्राण छोड़ना, मातुः = माता कैकेयी का, ऐश्वर्यलुब्धताम् = राज्य का लोभ, ज्येष्ठभ्रातुः = बड़े भाई श्रीराम का, प्रवासम् = वनगमन, त्रीन् दोषान् = इन तीन विपत्तियों को, कः = कौन, अभिधास्यति = बतायेगा।

टिप्पणी – प्राणपरित्यागम् = प्राणानां परित्यागम् (षष्ठी तत्पुरुष समास), ऐश्वर्यलुब्धता = ऐश्वर्यस्य लुब्धता (षष्ठी तत्पुरुष समास), कोऽभिधास्यति = कः+अभिधास्यति (पूर्वरूप सन्धि), पितुः = षष्ठी विभक्ति एकवचन, त्रीन् = द्वितीया विभक्ति बहुवचन।

प्रस्तुत पद्य में अनुष्टुप् छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है –

पंचमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्वितचुर्थयोः।
षष्ठं गुरु विजानीयात् एतत् पद्यस्य लक्षणम्।।

अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में पाँचवाँ वर्ण लघु, छठाँ गुरु और दूसरे तथा तीसरे चरणों में सातवाँ वर्ण लघु होता है वहाँ अनुष्टुप् छन्द होता है।

मूलपाठ – **(प्रविश्य)**

भटः – जयतु कुमारः।

भरतः – भद्र, किं शत्रुघ्नो मामभिगतः?

भटः – अभिगतः खलु वर्तते कुमारः। उपाध्यायास्तु भवन्तमाहुः।

भरतः – किमिति किमिति?

भटः – एकनाडिकावशेषः कृत्तिकाविषयः। तस्मात् प्रतिपन्नायामेव रोहिण्यामयोध्यां प्रवेक्ष्यति कुमारः।

भरतः – बाढमेवम्। न मया गुरुवचनमतिक्रान्तपूर्वम्। गच्छ त्वम्।

भटः – यदाज्ञापयति कुमारः। (निष्क्रान्तः)

भरतः – अथ कस्मिन् प्रदेशे विश्रमिष्ये। भवतु, दृष्टम्। एतस्मिन् वृक्षान्तराविष्कृते देवकुले मुहूर्तं विश्रमिष्ये। तदुभयं भविष्यति–दैवतपूजा विश्रमश्च। अथ च उपोपविश्य प्रवेष्टव्यानि नगराणीति सत्समुदाचारः तस्मात् स्थाप्यतां रथः।

अनुवाद –

(प्रवेश कर)

भट – राजकुमार की जय हो।

भरत – भद्र, क्या शत्रुघ्न मेरे स्वागत के लिये आ गये।

भट – शत्रुघ्न तो आ ही रहे हैं, उपाध्यायों ने आपके लिये कहा है।

भरत – उन लोगों ने मेरे लिये क्या कहा है?

भट – उन लोगों ने कहा है कि अभी कृत्तिका का भोगकाल एक दण्ड बाकी है उसके बीत जाने पर रोहिणी में कुमार अयोध्या में प्रवेश करें।

भरत –बहुत अच्छ। मैंने आज तक गुरुजनों की आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं किया है। अतः तुम जाओ।

भट – कुमार की जैसी आज्ञा (जाता है)।

भरत – तो अब किस जगह विश्राम करूँ। अच्छा दिखाई पड़ा। पेड़ों के बीच में दिखाई पड़ने वाले इस देवमन्दिर में कुछ क्षण तक विश्राम करूँगा। इससे दोनों बातें होंगी। प्रथम देवगणों की पूजा तदनन्तर विश्राम और ऐसा करने से एक विशिष्ट शिष्टाचार का पालन भी हो जायेगा कि नगर में प्रवेश करते समय पहले कुछ देर तक उस नगर के निकट में किसी स्थान पर विश्राम कर लेना चाहिये तो सूत, रथ को इसी जगह ठहरा लो।

मूलपाठ –

सूतः – यदाज्ञापयत्यायुष्मान्। (रथं स्थापयति)

भरतः – (रथादवतीर्य) सूत! एकान्ते विश्रामयाश्वान्।

सूतः – यदाज्ञापयत्यायुष्मान्। (निष्क्रान्तः)

भरतः – (किञ्चिद् गत्वावलोक्य) साधुमुक्तपुष्पलाजाविष्कृताः बलयः, दत्तचन्दनपञ्चाङ्गुलाः भित्तयः अवसक्तमाल्यदामशोभीनि द्वाराणि, प्रकीर्णा बालुकाः। किन्नु खलु पार्वणोऽयं विशेषः? अथवा आह्निकमास्तिक्यम्? कस्य नु खलु दैवतस्य स्थानं भविष्यति? नेह किञ्चित् प्रहरणं ध्वजो वा बहिश्चिह्नं दृश्यते। भवतु, प्रविश्य ज्ञास्ये (प्रविश्यावलोक्य) अहो क्रियामाधुर्यं पाषाणानाम्। अहो भावगतिराकृतीनाम्। दैवतोद्दिष्टानामपि मानुषविश्वासताऽऽसां प्रतिमानाम्। किन्नु खलु चतुर्दैवतोऽयं स्तोमः! अथवा यानि तानि भवन्तु। अस्ति तावन्मे मनसि प्रहर्षः।

अनुवाद –

सारथी – जैसी कुमार की आज्ञा। (रथ खड़ा करता है)

भरत – (रथ से उतरकर) सारथी, एकान्त में घोड़ों को आराम कराओ।

सारथी – जैसी आज्ञा। (प्रस्थान करता है)

भरत – (कुछ दूर जाकर पुनः देखकर) भली प्रकार से बिखेरे गये फूल तथा लाजा से मालूम पड़ता है कि ये देवताओं के पूजा के उपहार हैं। इनकी दीवारों पर पाँचों अङ्गुलियों के द्वारा चन्दन के छाप पाँच-पाँच पड़े हैं। मन्दिर के दरवाजे फूलों एवं

मालाओं से सुसज्जित किये गये हैं। मार्ग में कोमल तथा महीन रेंत बिछी हुई है। क्या यह सब किसी विशेष पर्व के उपलक्ष्य में किया गया है अथवा आस्तिक बुद्धि के कारण ऐसा प्रतिदिन होता है। पता नहीं, यह किसी देवता का स्थान है अथवा अन्य कुछ। परन्तु यहाँ कोई मन्दिर के बाहरी भाग पर ध्वज अथवा शस्त्र का चिह्न तो नहीं दिखाई पड़ता जिससे जाना जाये कि यह किसी देवता का मन्दिर है। अच्छा, भीतर प्रवेश करने पर जैसा होगा मालूम पड़ेगा। (भीतर जाकर और देखकर) अहो! इन पत्थरों पर कितनी महीन एवं सफाई से शिल्पकारी हुई हैं। इन मूर्तियों से कितनी स्पष्ट भावाभिव्यक्ति हो रही है कि देखकर आश्चर्य होता है। देवताओं की होती हुई भी ये मूर्तियाँ मनुष्य के जैसे – होने का विश्वास उत्पन्न करा रही हैं। क्या यहाँ चार देवताओं के समुदाय की प्रतिष्ठापना हुई है? जिससे चतुरायतन को प्रतीति हो रही है अथवा जो हो मुझे तो इन्हें देखकर अपार आनन्द हो रहा है।

मूलपाठ –

कामं दैवतमित्येव युक्तं नमयितुं शिरः।

वार्षलस्तु प्रणामः स्यादमन्त्रार्चितदैवतः ।।5।।

अन्वयः – दैवतमित्येव शिरः नमयितुं कामं युक्तम्। तु अमन्त्रार्चितदैवतः प्रणामः वार्षलः स्यात्।।5।।

व्याख्या – दैवतमित्येव–अत्र कोऽपि देवता इति बुद्धयैव शिरः नमयितुम्= नम्रीकर्त्तुं कामं युक्तम्। तु = किन्तु अमन्त्रार्चितं दैवतं न मन्त्रार्चितं न पूजितं दैवतं यत्र तथाभूतः प्रणामः वार्षलः = वृषलस्यायं वार्षलः = शूद्रवत् स्यात्। शूद्रो हि मन्त्रोच्चारणं विना देवतापूजनं करोति तथा च देवताज्ञाने सति कस्य देवस्य उच्चारयितव्यः निश्चयाभावात् अमन्त्रात्मकः प्रणामः कर्त्तव्यो भवेत् स च शूद्रवत् स्यात् तस्मात् प्रणामः शूद्रवत् करिष्यते। देवकुलिकः = देवकुले तिष्ठतीति देवकुलिकः = देवार्चने नियुक्तः। नैत्यकावसाने नित्ये भवः नैत्यकस्तस्य = नित्यकर्मणः अवसाने = अन्ते। प्राणिधर्मम् = जीवनार्थम् भोजनं ग्रहणम्। अल्पान्तराकृतिः–अल्पम् = ईषत् अन्तरः = भेदो यस्या सा अल्पान्तरा, अल्पान्तरा आकृतिर्यस्य सः अल्पान्तराकृतिः = अत्यन्तसदृशाकारवान्। नमोऽस्तु इति शब्देन भरतः प्रतिमामुद्दिश्य प्रणमति। ब्राह्मणभ्रमेण प्रणमन्तं भरतं देवकुलिकः वारयति–न खलु इति। भरतः निषेधन्तं देवकुलिकम् दृष्ट्वा वारणे कारणं जिज्ञासते–मा तावद् इत्यादि।।5।।

अनुवाद –

ये कोई देवता है ऐसा समझकर इन्हें प्रणाम करना उचित जान पड़ता है किन्तु इस प्रकार का प्रणाम प्रतिमा में देवता के निश्चय के अभाव से अमन्त्रकार्चा रहित शूद्र के समान होगा।।5।।

शब्दार्थ – दैवतम् = देवताओं की मूर्तियाँ, इत्येव = ऐसा समझकर, शिरः नमयितुम् = शिर झुकाना, युक्तम् = उचित ही है, प्रणामः तु = प्रणाम करना तो, मन्त्रार्चितदैवतः = मन्त्रों के बिना की गयी देवता की पूजा के समान, वार्षलः = अधम पुरुष के द्वारा की गयी पूजा।

टिप्पणी – वार्षलस्तु = वार्षलः+तु (विसर्ग सन्धि), अमन्त्रार्चितदैवतः = अमन्त्रेण अर्चित दैवतः येन सः (बहुव्रीहि समास)।

प्रस्तुत श्लोक में अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ –

देवकुलिकः – भोः! नैत्यिकावसाने प्राणिधर्ममनुतिष्ठति मयि को नु खल्वयमासां प्रतिमानामल्पान्तराकृतिरिव प्रतिमागृहं प्रविष्टः? भवतु प्रविश्य ज्ञास्ये। (प्रविशति)

भरतः – नमोऽस्तु!

देवकुलिकः – न खलु न खलु प्रणामः कार्यः!

भरतः – मा तावद् भोः!

वक्तव्यं किञ्चिदस्मासु विशिष्टः प्रतिपाल्यते।

किंकृतः प्रतिषेधोऽयं नियमप्रभविष्णुता।।6।।

अन्वयः – अस्मासु किञ्चिद् वक्तव्यम् (अथवा) विशिष्टः प्रतिपाल्यते। अयं प्रतिषेधः किं कृतः। अथवा नियमप्रभविष्णुता (कारणम्)।।6।।

व्याख्या – अस्मासु किञ्चिद् वक्तव्यम् दोषः अस्तीति शेषः। येन त्वम् मां निषेधसीत्यर्थः। अथवा विशिष्टः = मदपेक्षः या वरिष्ठः प्रतिपाल्यते = प्रतीक्ष्यते। अयम् मम प्रतिषेधः = वारणरूपः प्रतिषेधः किं कृतः केन कारणेनेति यावत्। अथवा नियमप्रभविष्णुता–नियमे प्रणामरूपे प्रभविष्णुता = स्वातन्त्र्यं तवेति शेषः। अयं प्रणमन्तुं प्रभवति अयं नेति विधये तव स्वतन्त्रः सामर्थ्यं किमति भावः। एतैः = भवदुक्तैः कारणैः हेतुभिः। देवताशङ्कया प्रतिमासु देवतात्वभ्रमेण। ब्राह्मणजनस्य कदाचिद् भवान् ब्राह्मणो भवेदित्याशङ्कया। ब्राह्मणमात्रस्य। परिहरामि = वारयामि। अयोध्याभारः = अयोध्याराजानः।

अनुवाद –

(पुजारी का प्रवेश)

पुजारी – अरे यह मूर्तियों के समान मिलते-जुलते रूप वाला कौन पुरुष है जो नित्यक्रिया कर लेने के पश्चात् मेरे भोजन के समय ही इस प्रतिमागृह में बिना पूछे घुस आया है। अच्छा! स्वयं प्रतिमागृह में जाकर इसका पता लगाता हूँ। (भीतर जाता है)

भरत – मूर्तियों को प्रणाम करते हैं।

पुजारी – नहीं नहीं, इन्हें प्रणाम मत करो।

भरत – क्यों मुझे प्रणाम करने से रोक रहे हो?

क्या हम में कोई दोष है अथवा हमारी अपेक्षा किन्हीं विशिष्ट व्यक्ति की प्रणाम के लिये प्रतीक्षा करते हो। अथवा इस प्रतिमागृह के अधिकारी होने के नाते तुम अपने आप नियम बनाने में स्वतन्त्र हो जिसे चाहे जाने दो जिसे चाहे न जाने दो।।6।।

शब्दार्थ – अस्मासु = मुझ भरत में, किञ्चिद् वक्तव्यम् = कुछ कहने योग्य, विशिष्टः = विशेष रूप से, प्रतिपाल्यते किम् = क्या प्रतीक्षा की जा रही है, प्रतिषेधः = प्रणाम करने का प्रतिषेध, नियमप्रभविष्णुता = नियम पालन की स्वतन्त्रता।

टिप्पणी – नियमप्रभविष्णुता = नियमानां प्रभविष्णुता (षष्ठी तत्पुरुष समास), किंकृतः = केन कारणेन कृतः (तृतीया तत्पुरुष समास), प्रतिषेधोऽयम् = प्रतिषेधः+अयम् (पूर्वरूप सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में आक्षेप अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ –

देवकुलिकः – न खल्वेतैः कारणैः प्रतिषेधयामि भवन्तम्। किन्तु दैवतशङ्कया ब्राह्मणजनस्य प्रणामं परिहरामि। क्षत्रिया ह्यत्रभवन्तः।

भरतः – एवम्। क्षत्रिया ह्यत्रभवन्तः। अथ के नामात्रभवन्तः?

देवकुलिकः – इक्ष्वाकवः।

भरतः – (सहर्षम्) इक्ष्वाकव इति। एते तेऽयोध्याभर्तारः।

एते ते देवतानामसुरपुरवधे गच्छन्त्यभिसरी–
मेते ते शक्रलोके सपुरजनपदा यान्ति स्वसुकृतैः।
एते ते प्राप्नुवन्तः स्वभुजबलजितां कृत्स्नां वसुमती–
मेते ते, मृत्युना ये चिरमनवसिताश्छन्दं मृगयता।।7।।

अन्वयः – एते ते (ये) असुरपुरवधे देवतानाम् अभिसरीं गच्छन्ति। एते ते स्वसुकृतैः सपुरजनपदाः शक्रलोके यान्ति। एते ते (ये) स्वभुजबलजितां कृत्स्नां वसुमतीं प्राप्नुवन्तः। एते ये छन्दं मृगयता मृत्युना चिरम् अनवसिताः।।7।।

व्याख्या – एते ते (ये) असुरपुरवधे–असुरपुराणाम् = देवारिनगराणाम् वधे = विनाशे दैवतानाम् = देवसमूहानाम् अभिसरीम्–अभितः = परितः चरतीति साहाय्यार्थमभिगमनं कृत्वा गच्छन्तीति भावः। एते ते ये स्वसुकृतैः = स्वपुण्यैः सपुरजनपदाः–पुरैः जनपदैश्च सहिताः सपुरजनपदाः = पुरजनपदः जनैः सहिताः शक्रलोके = स्वर्गे गच्छन्ति। एते ते ये स्वभुजबलजिताम् = स्वभुजयोः बलेन = पराक्रमेण, जिताम् = स्वायत्तीकृताम् कृत्स्नाम् = सम्पूर्णाम् वसुमतीम् = रत्नगर्भाम् मेदिनीम्, प्राप्नुवन्तः = स्वायत्तीकृतवन्तः। एते ते ये छन्दसः स्वाभिलाषः = स्वाभिप्रायं वा मृगयता = अन्विष्यता मृत्युना = कालेन चिरम् = चिरकालपर्यन्तम् अनवसिताः = असमापिता अभक्षिता इत्यर्थः यतस्ते स्वच्छन्द मृत्यव आसन् अतएव मृत्युः प्रतीक्षते यत्कदा इमे स्वकीयं मरणमभिलषन्तीत्यर्थः। सुवदना वृत्तम्। 'ज्ञेया सप्ताश्वषड्भिर्मरम नवयुता म्लौनः सुवदना' इति तल्लक्षणम् ।।7।।

अनुवाद –

पुजारी – नहीं, मेरे रोकने में ये कारण नहीं हैं जिससे आपको रोक रहा हूँ किन्तु इसलिये रोक रहा हूँ कि कहीं ब्राह्मण होकर इन राजाओं की मूर्ति को भ्रम से प्रणाम न कर लो क्योंकि ये क्षत्रियों की प्रतिमायें हैं, देवताओं की नहीं।

भरत – क्या कहा? ये क्षत्रिय महानुभाव हैं? तो इन महानुभावों का क्या नाम है?

पुजारी – ये इक्ष्वाकुवंशीय लोग हैं।

भरत – (प्रसन्नतापूर्वक) क्या ये वही इक्ष्वाकुवंशीय जो अयोध्या के नरेश होते आये हैं।

ये वही लोग हैं जो असुरों की पुरियों का विनाश करने के लिये देवताओं के साथ चारों ओर स्थित आगे रहकर उनकी सहायता करने के लिये इस मृत्युलोक से देवलोक जाते थे। ये वही लोग हैं जो अपने पुण्य बल से समस्त पुरवासियों एवं जनपदवासियों के साथ इन्द्रपुरी (स्वर्ग) में जाते थे। ये वही लोग हैं जो अपनी भुजाओं के बल से जीती गई सम्पूर्ण रत्नगर्भा पृथ्वी पर शासन करते थे, किंबहुना ये वही लोग

हैं जो मृत्यु के द्वारा चाहे जाने पर भी अपनी इच्छानुसार मृत्यु के कारण देर तक कालकवलित नहीं हुए। अहा! अकस्मात् मुझे इस फल का महान् लाभ मिला। अच्छा बताइये ये कौन से महानुभाव हैं?।।7।।

शब्दार्थ – एते ते = क्या ये वही हैं जो, असुरपुरवधे = राक्षसों के नगर का विनाश करने में, देवतानाम् = देवताओं की, अभिसरीम् = सहायता के लिए, गच्छन्ति = जाते हैं, ते = ये वही हैं जो, स्वसुकृतैः = अपने पुण्यों से, स्वपुरजनपदा = अपने देश और प्रजा के साथ, शक्रलोके = इन्द्र लोक को, यान्ति = जाते हैं, एते ते = ये वही हैं जो, स्वभुजबलजिताम् = अपने बाहुबल से जीती गयी, कृत्स्नाम् = सम्पूर्ण, वसुमतीम् = पृथ्वीमण्डल को, प्राप्नुवन्ति = प्राप्त करते हैं, मृगयता = अन्वेषण करती हुई, मृत्युना = मृत्यु के द्वारा, चिरम् = बहुत काल के लिए, अनवसिताः = मुक्त कर दिए गए थे।

टिप्पणी – असुरपुरवधे = असुराणां पुराणि असुरपुराणि तेषां वधे (षष्ठी तत्पुरुष समास), सपुरजनपदाः = पुरैः जनपदैः सहिताः (अव्ययीभाव समास), स्वभुजबलजिताम् = स्वभुजयोः बलेन जिताम् (तृतीया तत्पुरुष समास), गच्छन्त्यभिसरीम् = गच्छन्ति+अभिसरीम् (यण् सन्धि), शक्रलोके = शक्रस्य लोकेः (षष्ठी तत्पुरुष समास), स्वसुकृतैः = स्वस्य सुकृतैः (षष्ठी तत्पुरुष समास)।

प्रस्तुत श्लोक में सुवदना छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है **''ज्ञेया सप्ताश्वषड्भिः मरभनययुता म्लौ गः सुवदना।''** अर्थात् जिस छन्द में मगण, रगण, भगण, नगण, यगण, मगण, एक लघु और अन्त में एक गुरु वर्ण हो तथा सातवें और छठें वर्ण पर यति हो, वहाँ सुवदना छन्द होता है।

मूलपाठ –

भोः! यदृच्छया खलु मया महत् फलमासादितम्! अभिधीयतां कस्तावदत्रभवान्?

देवकुलिकः – अयं खलु तावत् सन्निहितसर्वरत्नस्य विश्वजितो यज्ञस्य प्रवर्तयिता प्रज्वलितधर्मप्रदीपो दिलीपः।

भरतः – नमोऽस्तु धर्मपरायणाय। अभिधीयतां कस्तावदत्रभवान्?

देवकुलिकः – अयं खलु तावत् संवेशनोत्थापनयोरनेक ब्राह्मणजनसहस्त्रप्रयुक्तपुण्याहशब्दरवो रघुः।

भरतः – अहो बलवान् मृत्युरेतामपि रक्षामतिक्रान्तः। नमोऽस्तु ब्राह्मणजनावेदितराज्यफलाय। अभिधीयतां कस्तावदत्रभवान्?

देवकुलिकः – अयं खलु तावत् प्रियावियोगनिर्वेदपरित्यक्तराज्यभारो नित्यावभृथस्नानप्रशान्तरजा अजः।

भरतः – नमोऽस्तु श्लाघनीयपश्चात्तापाय। (दशरथस्य प्रतिमामवलोकयन् पर्याकुलो भूत्वा) भोः! बहुमानव्याक्षिप्तेन मनसा सुव्यक्तं नावधारितम्। अभिधीयतां कस्तावदत्रभवान्?

देवकुलिकः – अयं दिलीपः।

भरतः – पितृपितामहो महाराजस्य। ततस्ततः।

देवकुलिकः – अत्र भवान् रघुः।

भरतः – पितामहो महाराजस्य। ततस्ततः।

अनुवाद –

अच्छा तो अनायास ही हमने महान् फल पा लिया। कहिए ये महानुभाव कौन हैं?

पुजारी – ये हैं महाराज दिलीप। जो सज्जनों में पृथ्वी के सारे रत्नों को दान में दिये जाने वाले विश्वजित् यज्ञ के प्रवर्तक एवं धर्मप्रदीप के प्रकाशक हैं।

भरत – ऐसे धर्मपरायण को मेरा नमस्कार। अच्छा आगे कहिये ये कौन से महानुभाव हैं?

पुजारी – ये हैं महाराज रघु जिनके शयन एवं प्रबोधकाल में अनेक ब्राह्मणों के द्वारा सहस्त्रों बार किये जाने वाले पुण्य आवाहन के शब्द उनके कानों को पूर्ण किया करते थे।

भरत – अहो यह मृत्यु कितनी बलवान् है जो पुण्य आवाहन के शब्दों से रक्षित इन महानुभाव का भी अतिक्रमण कर गई। ब्राह्मणों की सेवा में अपनी समग्र सम्पत्ति अर्पित करने वाले इन महाराज रघु को मेरा प्रणाम। ये आगे कौन है?

पुजारी – अपनी प्रियतमा महारानी के वियोग से विरक्त हो जाने पर अपने राज्यभार को त्याग देने वाले एवं नित्य प्रति किये जाने वाले यज्ञों के अन्त में अवभृथ स्नान से समस्त पापों को प्रक्षालित करने वाले ये हैं महाराज अज।

भरत – इस प्रकार के श्लाघनीय पश्चाताप करने वाले आपको नमस्कार। (दशरथ की प्रतिमा को देखते हुए घबड़ाकर) अत्यन्त सम्मान की दृष्टि से देखने में लगे रहने पर भी बीच में कुछ ऐसी बात आ जाने के कारण मेरा मन उधर चला गया था इसलिये इन्हें ठीक से समझ न सका। अच्छा, पुनः कहिये कि ये कौन हैं?

पुजारी – यह हैं दिलीप।

भरत – महाराज के प्रपितामह। अच्छा, आगे चलिये।

पुजारी – ये हैं रघु।

भरत – महाराज के पितामह। इसके आगे।

मूलपाठ –

देवकुलिकः – अत्र भवानजः।

भरतः – पिता तातस्य। किमिति किमिति?

देवकुलिकः – अयं दिलीपः, अयं रघुः, अयमजः।

भरतः – भवन्तं किञ्चित्पृच्छामि। धरमाणानामपि प्रतिमाः स्थाप्यन्ते?

देवकुलिकः – न खलु अतिक्रान्तानामेव।

भरतः – तेन ह्यापृच्छे भवन्तम्।

देवकुलिकः – तिष्ठ।

येन प्राणाश्च राज्यं च स्त्रीशुल्कार्थे विसर्जिताः।
इमां दशरथस्य त्वं प्रतिमां किं नु पृच्छसे? ।।8।।

अन्वयः – येन स्त्रीशुल्कार्थे प्राणाः राज्यं च विसर्जिताः त्वं दशरथस्य इमां प्रतिमां किं नु पृच्छसे? ।।8।।

व्याख्या – येनेति–येन = राज्ञा दशरथेन स्त्रीशुल्कार्थे = पूर्वविवाहावसरे स्त्रियैः देयतया प्रतिज्ञातं द्रव्यं स्त्रीशुल्कम्। तदर्थे प्राणाः = जीवनं राज्यं च विसर्जिताः = परित्यक्ताः तस्य दशरथस्य इमां पुरोवर्तिनी प्रतिमाः प्रति त्वं किं नु = कस्मात् कारणात् न पृच्छसे = न ज्ञातुमिच्छसि। अनुष्टुप् छन्दः।।8।।

अनुवाद –

पुजारी – ये हैं अज।

भरत – महाराज के पिता। क्या कहा, क्या कहा?

पुजारी – ये दिलीप हैं, ये रघु हैं और ये अज हैं।

भरत – अब आपसे कुछ और पूछना चाहता हूँ। क्या जीवितों की भी प्रतिमायें स्थापित की जाती हैं?

पुजारी – नहीं, जो लोग मर चुके हैं केवल उन्हीं की।

भरत – तो अब आप मुझे जाने की अनुमति दीजिये।

पुजारी – ठहरिये।

जिन्होंने स्त्री-शुल्क के लिये अपने राज्य एवं प्राण दोनों दे दिये उन महाराज दशरथ की प्रतिमा के विषय में आप क्यों कुछ नहीं जानना चाहते।।8।।

शब्दार्थ – येन = जिसके द्वारा, स्त्रीशुल्कार्थे = पत्नी कैकेयी का वचन पूर्ण करने के लिए, प्राणाः राज्यं च = प्राण और राज्य दोनों का, विसर्जिताः = विसर्जन कर दिया, इमाम् = इस, दशरथस्य = महाराज दशरथ की, प्रतिमाम् = प्रतिमा के बारे में, किम् = क्यों, न पृच्छसे = नहीं पूछ रहे हो।

टिप्पणी – स्त्रीशुल्कार्थे = स्त्रियः शुल्कार्थे (षष्ठी तत्पुरुष समास), प्राणाश्च = प्राणाः+च (विसर्ग सन्धि), विसर्जिताः = वि+सृज+क्त, प्रतिमाम् = द्वितीया विभक्ति एकवचन, दशरथस्य = षष्ठी विभक्ति एकवचन।

प्रस्तुत श्लोक में अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ –

भरतः – हा तात! (मूर्च्छितः। पुनः प्रत्यागत्य)

हृदय! भव सकामं यत्कृते शङ्कसे त्वं
शृणु पितृनिधनं तद् गच्छ धैर्यं च तावत्।
स्पृशति तु यदि नीचो मामयं शुल्कशब्द–
स्त्वथ च भवति सत्यं तत्र देहो विशोध्यः।।9।।

अन्वयः – हे हृदय! सकामं भव। यत्कृते त्वं शङ्कसे तत् पितृनिधनं शृणु। तावद् धैर्यं च गच्छ यदि अयं नीचः शुल्कशब्दः माम् स्पृशति अथ च सत्यं भवति तदा तत्र देहः विशोध्यः भवेत्।।9।।

व्याख्या – हृदय इति–हे हृदय = हे चित्त सकामं = सफलमनोरथं भव। त्वं यत्कृते = यस्मिन् विषये शङ्कसे = संदिहानः आसीः तत् स्वाशङ्कितं पितृ मरणरूपं विषयं शृणु निःशङ्कमाकर्णय। त्वया मध्ये मार्ग जायमानैरपशकुनैरन्ये विकृतलक्षणैश्च

यत्पितृमरणं संभावितम् तदेवाधुना संशृण्वन्नात्मनः मनोऽभिलाषं पूरय इति स्पष्टार्थः। तावद् धैर्यं = धीरतां च गच्छ = अवलम्बस्व। तु–किन्तु अयं नीचः = अधमः शुल्कशब्दः यदि मां स्पृशति = मामुद्दिश्य कथितो भवेत् यदि स्त्रीशुल्कतया मद्राज्याभिषेक एवैतस्य कथनाभिप्रायः अथ चैतत् सत्यं भवेत्तदा तत्र तादृशायामवस्थायां देहः = शरीरम् विशोध्यः = प्रायश्चित्तादिना संशोध्य इत्यर्थः। मालिनी वृत्तम्। 'ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः'। इति तल्लक्षणम्।।9।।

अनुवाद –

भरत – हाय पिताजी! (ऐसा कह कर मूर्च्छित हो गिर जाते हैं पुनः होश में आकर) .

हृदय! अब तुम्हारी वह अभिलाषा पूर्ण हुई जिसकी तुम आशङ्का करते थे, इस पितृमरण के वृत्तान्त को सुनो और धीरज धरो। किन्तु हाय! यदि इस नीच शुल्क शब्द का उद्देश्य मुझसे है और यदि यह सत्य है, तब तो इस देह की शुद्धि करनी पड़ेगी।।9।।

शब्दार्थ – सकामम् = सन्तुष्ट, भव = हो जाओ, त्वं यत्कृते = तुम जिसके लिए, शङ्कसे = शंका करते हो, तत् = वह, पितृनिधनम् = पिता दशरथ के मृत्यु का समाचार, शृणु = सुनो, धैर्यं च गच्छ = और धैर्य धारण करो, नीचः = अधम, मां स्पृशति = मेरा स्पर्श कर रहा है, अथ च = और यदि यह, सत्यं भवति = सत्य होता है तो, देहः विशोध्यः = शरीर को निरपराध सिद्ध करना होगा।

टिप्पणी – सकामम् = कामेन सहितम् (अव्ययीभाव समास), पितृनिधनम् = पितुः निधनम् (षष्ठी तत्पुरुष समास), यत्कृते = यस्य कृते (षष्ठी तत्पुरुष समास), शङ्कसे = मध्यम पुरुष, एकवचन।

प्रस्तुत श्लोक में मालिनी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है **''ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलौकैः।''** अर्थात् जहाँ दो नगण, एक मगण और दो यगण हों, तो वहाँ मालिनी छन्द होता है।

मूलपाठ –

आर्य!

देवकुलिकः – आर्येति इक्ष्वाकुकुलालापः खल्वयम्। कच्चित् कैकेयीपुत्रो भरतो भवान् ननु?

भरतः – अथ किम्, अथ किम्। दशरथपुत्रो भरतोऽस्मि, न कैकेय्याः।

देवकुलिकः – तेन ह्यापृच्छे भवन्तम्।

भरतः – तिष्ठ। शेषमभिधीयताम्।

देवकुलिकः – का गतिः? श्रूयताम्। उपरतस्तत्रभवान् दशरथः।
सीतालक्ष्मणसहायस्य रामस्य वनगमनप्रयोजनं न जाने।

अनुवाद –

आर्य!

पुजारी – आर्य इस शब्द का प्रयोग तो वार्तालाप के प्रसङ्ग में इक्ष्वाकुवंशियों की परम्परा है तो आप कैकेयी के पुत्र भरत है क्या?

भरत – और क्या और क्या! मैं वही दशरथपुत्र भरत हूँ किन्तु कैकेयी का पुत्र भरत नहीं।

पुजारी – तो अब जाने के लिये आपकी अनुमति चाहता हूँ।

भरत – ठहरो। अभी शेष भी कहो।

पुजारी – अब तो बचने का कोई उपाय नहीं रहा। अच्छा सुनिये। पूज्य महाराज दशरथ तो मर गये। किन्तु सीता और लक्ष्मण के साथ राम क्यों वन चले गये इसका कारण मुझे ज्ञात नहीं।

मूलपाठ –

भरतः – कथं कथमार्योऽपि वनं गतः। (द्विगुणं मोहमुपगतः)

देवकुलिकः – कुमार! स्माश्वसिहि समाश्वसिहि।

भरतः – (समाश्वस्य)

अयोध्यामटवीभूतां पित्रा भ्रात्रा च वर्जिताम्।
पिपासार्तोऽनुधावामि क्षीणतोयां नदीमिव।।10।।

अन्वयः – पित्रा भ्रात्रा च वर्जिताम् अटवीभूताम् अयोध्यां पिपासार्तः क्षीणतोयाम् नदीम् इव अनुधावामि।।10।।

व्याख्या – परलोकगतेन पित्रा दशरथेन, वनवासगतेन भ्रात्रा रामेण च वर्जिताम् = रहिताम् अतएव अटवीभूताम् = अरण्यसदृशीम् अयोध्याम् = स्वजन्मस्थलीम् पिपासार्तः–पिपासया = तृष्णा आर्तः = आतुरः = पीडितः अहम् क्षीणतोयाम्–क्षीणम् = शुष्कम्, तोयं = जलम् यस्यास्तथाभूतां नदीम् = सरितमिव अनुधावामि = शीघ्रतया गन्तुं प्रवृत्तोऽस्मि। अयं भावः–यथा कोऽपि तृषितः निर्जला नदीमनुगच्छन् विफलप्रयासो भवति तथाहमपि पितृभ्रातृरहितां सर्वथारण्यसदृशीं स्नेहशून्याम् अयोध्यां प्रविशामि। तत्राभिलाषपूर्तेरसंभवादित्यर्थः। उपमालङ्कारः। अनुष्टुप् छन्दः।।10।।

अनुवाद –

भरत – क्या कहते हो! आर्य भी वन चले गये (द्विगुणित मूर्च्छित हो जाते हैं)

पुजारी – कुमार! धीरज धरिये, धीरज धरिये।

भरत – (होश में आकर) पिता और भाई से शून्य अरण्य के समान उस अयोध्या में मैं व्यर्थ का दौड़ता हुआ जा रहा हूँ। जिस प्रकार कोई प्यासा मरुस्थल में सूखी नदी की ओर दौड़ता हुआ जाता है।।10।।

शब्दार्थ – पित्रा भ्रात्रा च वर्जिताम् = पिता और भाई से रहित, अटवीभूताम् = वन की तरह प्रतीत होने वाली, अयोध्याम् = अयोध्या नगरी के लिए, पिपासार्तः = प्यास से व्याकुल व्यक्ति, क्षीणतोयाम् = जल से रहित, अनुधावामि = दौड़ रहा हूँ।

टिप्पणी – पिपासार्तः = पिपासया आर्तः (तृतीया तत्पुरुष समास), क्षीणतोयाम् = क्षीणं तोयं यस्याः सा (बहुव्रीहि समास), पित्रा = तृतीया विभक्ति एकवचन, भ्रात्रा = तृतीया विभक्ति एकवचन।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ–

आर्य! विस्तरश्रवणं मे मनसः स्थैर्यमुत्पादयति। तत् सर्वमनवशेषमभिधीयताम्।

देवकुलिकः – श्रूयतां, तत्रभवता राज्ञाभिषिच्यमाने तत्रभवति रामे भवतो जनन्याऽभिहितं किल।

भरतः – तिष्ठ।

तं स्मृत्वा शुल्कदोषं भवतु मम सुतो राजेत्यभिहितं
तद्धैर्येणाश्वसन्त्या व्रज सुत! वनमित्यार्योऽप्यभिहितः।
तं दृष्ट्वा बद्धचीरं निधनमसदृशं राजा ननु गतः
पात्यन्ते धिक्प्रलापा ननु मयि सदृशाः शेषाः प्रकृतिभिः।।11।।

अन्वयः – तं शुल्कदोषं स्मृत्वा मम सुतो राजा भवतु इति (तया) अभिहितम्। तद् धैर्येण आश्वसन्त्या तया हे सुत वनं व्रज इति आर्यः अभिहितः (भवेत्)। तं बद्धचीरं दृष्ट्वा राजा असदृशम् निधनम् गतः ननु। प्रकृतिभिः शेषाः सदृशाः धिक्प्रलापाः मयि पात्यन्ते ननु ।।11।।

व्याख्या – तं स्मृत्वेति–तं = पूर्वोक्तम् शुल्कदोषम्–शुल्कस्य दोषम् = अनर्थकारकम् वैवाहिकपणम् स्मृत्वा = मनसि निधाय 'मम सुतो भरतः राजा भवतु' इति कैकेय्या राज्ञेऽभिहितम् उक्तम्। तद्धैर्येण स्वोक्तार्थस्य राज्ञा स्वीकृतत्वेन पुत्रकर्तृकराज्यत्वप्राप्तेरित्यर्थः। आश्वसन्त्या 'ससन्तोषम्' विश्वसन्त्या तया हे सुत 'वनं व्रज' इति आर्यः अपि = रामः अपि अभिहितः = आज्ञप्तः। तम् आर्य = रामम् बद्धचीरम्–बद्धानि वने वासार्थम् परिहितानि चीराणि = वल्कलवसनानि येन तम्। दृष्ट्वा = विलोक्य राजा = पिता दशरथः असदृशम् = अयोग्यम् स्वरूपविरुद्धम् निधनम् = मत्युं गतः। ननु = निश्चये। पुत्रशोका स्वप्राणान् जहौ इत्यर्थः। अधुना प्रकृतिभिः अमात्यादिभिः पुरोगैः = पुरोवासिभिः शेषाः = अवशिष्टाः धिक्प्रलापाः = धिक्कारयुक्तानि वचनानि सदृशाः उचिताः मयि = भरते पात्यन्ते = निधीयन्ते निक्षिप्यन्ते वा ननु इति सम्भवनार्थे। सुवदनावृत्तम्। लक्षणं प्रागुक्तम्।।11।।

अनुवाद –

आर्य! इस विषय में विस्तृत विवरण सुनने से मेरा मन स्थिर हो सकेगा। अतः आप सारी बातें पूर्ण रूप से मुझसे कहिये।

पुजारी – अच्छा सुनिये। जब पूज्य राम का तत्रभवान् महाराज अभिषेक कर रहे थे उस समय आपकी माता ने कहा।

भरत – अच्छा ठहरो।

विवाहकालीन शुल्क (शर्त) जो सर्वथा दोषपूर्ण थी उसका स्मरण कर इस कैकेयी ने कहा होगा कि मेरा पुत्र राजा होवे। जब महाराज ने अपने धैर्य से इस प्रकार का वरदान देकर उसे आश्वस्त किया होगा तो उसने हे सुत 'तुम वन जाओ' ऐसा राम से कहा होगा। तदनन्तर वनवासोचित चीर परिधान से युक्त देखकर राजा भी उसी असमय में मृत्यु को प्राप्त हुए होंगे। फिर तो सारी प्रजायें मुझे ही सभी अनर्थों का मूल मानकर धिक्कार रही होगीं जो उनके लिए उचित भी है।।11।।

शब्दार्थ – तम् = उस, शुल्कदोषम् = शुल्क के दोष को, स्मृत्वा = स्मरण करके, मम सुतः = मेरा पुत्र, राजा भवतु = राजा बने, तया = कैकेयी के द्वारा, अभिहितम् = कहा गया, आश्वसन्त्यः = आश्वस्त होना, वनं व्रज = वन जाओ, आर्यः = राम, बद्धचीरं दृष्ट्वा = चीर धारण किए हुए देखकर, राजा = पिता दशरथ की, असदृशम् = अकाल, निधनं गतः = मृत्यु हो गई, प्रकृतिभिः = प्रजाओं के द्वारा, सदृशाः = अनुकूल, धिक्प्रलापा = धिक्कार युक्त वचन, मयि = मुझ भरत पर।

टिप्पणी – शुल्कदोषम् = शुल्कस्य दोषम् (षष्ठी तत्पुरुष समास), बद्धचीरम् = बद्धः चीरः येन सः (बहुव्रीही समास), असदृशम् = न सदृशम् (नञ् तत्पुरुष समास), राजेत्यभिहितम् = राजा+इत्यभिहितम् (गुण सन्धि), राजेत्यभिहितम् = राजेति+ अभिहितम् (यण् सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में सुवदना छन्द है।

बोध प्रश्न

1) प्रतिमागृह में किनकी प्रतिमाएं थीं?

.....

.....

.....

2) दिलीप ने कौन सा यज्ञ किया था?

.....

.....

.....

3) 'सकामम्' पद का समास विग्रह कीजिए।

.....

.....

.....

4) 'अटवी' पद का क्या तात्पर्य है?

.....

.....

.....

5) 'असदृशम्' पद में कौन सा समास है?

.....

.....

.....

अभ्यास प्रश्न

1) 'हृदय! भव सकामं यत्कृते शङ्कसे त्वं' श्लोक की व्याख्या कीजिए।

10.3 सारांश

इस इकाई में आपने अध्ययन किया कि सुधाकार (सफाईकर्मी) प्रतिमागृह की स्वच्छता का कार्य पूरा करके विश्राम करने लगता है तभी एक सिपाही आकर उसे मारता है। सिपाही सफाईकर्मी से पूछता है कि प्रतिमागृह की स्वच्छता का कार्य पूर्ण हुआ या नहीं क्योंकि आज महाराज दशरथ की प्रतिमा को देखने के लिए प्रतिमागृह में कौशल्या आदि सभी रानियाँ आने वाली हैं। सफाईकर्मी बताता है कि वहाँ सफाई का कार्य पूर्ण कर लिया गया है। वहाँ लगे कबूतरों के घोंसले हटा दिए गए हैं। दीवारों पर सफेदी करवा दी गई है। चन्दन से पाँच अँगुलियों की छापें लगवा दी गई हैं तथा दरबों को पुष्प मालाओं से सजा दिया गया है। सिपाही इस वृत्तान्त से मन्त्री को अवगत कराता है। तभी सारथि के साथ भरत का प्रवेश होता है। भरत अपने ननिहाल से आ रहे हैं। उन्हें दशरथ की मृत्यु का पता नहीं है किन्तु इतना अवश्य ज्ञात है कि महाराज दशरथ अत्यधिक रुग्ण हैं। नाना आशंकाओं के बीच मार्ग में चलते हुए भरत रथ की तीव्र गति का वर्णन करते हैं तथा सारथि उनका समर्थन करता है। भरत देवमन्दिर में प्रविष्ट होते हैं और पूर्वजों की प्रतिमाओं को प्रणाम करने के क्रम में वहाँ लगी दशरथ की प्रतिमा को देखते हैं। देवकुलिक उन्हें प्रत्येक राजा का परचिय देता हुआ उन राजाओं के द्वारा किए गए विशिष्ट कार्यों का भी उल्लेख करता है। दशरथ की प्रतिमा का परिचय देते हुए देवकुलिक भरत से कहता है कि जिन्होंने स्त्री शुल्क के कारण अपने प्राण और राज्य दोनों छोड़ दिए आप उन महाराज दशरथ की मूर्ति के बारे में क्यों नहीं पूछ रहे? भरत के मन में दशरथ की मृत्यु के विषय में पहले से ही आशंका थी वह देवकुलिक के वचन से सत्य सिद्ध होती है। वार्तालाप के क्रम में देवकुलिक भरत को बताता है कि महाराज दशरथ दिवंगत हो गये हैं तथा सीता और लक्ष्मण के साथ राम वन चले गए हैं। भरत पिता दशरथ तथा भाई राम से रहित अयोध्या को जंगल की संज्ञा देते हैं और अपनी माता के द्वारा किए गए इस कुकृत्य को जानकर मूर्च्छित हो जाते हैं। उसी समय वहाँ कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयी पहुँचती हैं।

10.4 शब्दावली

भिषजः	–	चिकित्सक
द्रुमाः	–	वृक्ष
उपगताः	–	पास आए हुए थे
प्रवासम्	–	वनगमन
इत्येव	–	ऐसा समझकर
नियमप्रभविष्णुता	–	नियम पालन की स्वतन्त्रता
वसुमतीम्	–	पृथ्वीमण्डल को
शृणु	–	सुनो
पिपासार्तः	–	प्यास से व्याकुल व्यक्ति
धनं गतः	–	मृत्यु हो गई

10.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

i) प्रतिमानाटकम् (अनु.) डॉ. श्री कृष्ण ओझा, आदर्श प्रकाशन, जयपुर ।

ii) प्रतिमानाटकम् (व्या.) डॉ. सावित्री गुप्ता, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 2006

iii) प्रतिमानाटकम् (व्या.) आचार्य जगदीश चन्द्र मिश्र, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2009

iv) प्रतिमानाटकम् (सम्पा.) श्रीधरानन्द शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली, 2016

v) संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास (ले.) डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायणलाल विजयकुमार प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018

10.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न

1) प्रतिमागृह में इक्ष्वाकुवंशीय क्षत्रियों की प्रतिमाएं थीं।

2) दिलीप ने विश्वजित् यज्ञ किया था।

3) 'सकामम्' पद का समास विग्रह – कामेन सहितम्।

4) 'अटवी' पद का तात्पर्य है – वन।

5) 'असदृशम्' पद में नञ् तत्पुरुष समास है।

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।